विभीषण की प्रार्थना, श्री रामजी के द्वारा भरतजी की प्रेमदशा का वर्णन, शीघ्र अयोध्या पहुँचने का अनुरोध

चौपाई :

*** करि बिनती जब संभु सिधाए। तब प्रभु निकट बिभीषनु आए॥ नाइ चरन सिरु कह मृदु बानी। बिनय सुनहु प्रभु सारँगपानी॥1॥

भावार्थ:-

जब शिवजी विनती करके चले गए, तब विभीषणजी प्रभु के पास आए और चरणों में सिर नवाकर कोमल वाणी से बोले- हे शार्ग धनुष के धारण करने वाले प्रभो! मेरी विनती सुनिए-॥1॥

*** सकुल सदल प्रभु रावन मार्‌यो। पावन जस त्रिभुवन विस्तार्‌यो॥ दीन मलीन हीन मति जाती। मो पर कृपा कीन्हि बहु भाँती॥2॥

भावार्थ:-

आपने कुल और सेना सहित रावण का वध किया, त्रिभुवन में अपना पवित्र यश फैलाया और मुझ दीन, पापी, बुद्धिहीन और जातिहीन पर बहुत प्रकार से कृपाकी॥2॥

*** अब जन गृह पुनीत प्रभु कीजे। मज्जन करिअ समर श्रम छीजे॥ देखि कोस मंदिर संपदा। देहु कृपाल कपिन्ह कहुँ मुदा॥3॥

भावार्थ:-

अब हे प्रभु! इस दास के घर को पवित्र कीजिए और वहाँ चलकर स्नान कीजिए, जिससे युद्ध की थकावट दूर हो जाए। हे कृपालु! खजाना, महल और सम्पत्ति का निरीक्षण कर प्रसन्नतापूर्वक वानरों को दीजिए॥3॥

*** सब बिधि नाथ मोहि अपनाइअ। पुनि मोहि सहित अवधपुर जाइअ॥ सुनत बचन मृदु दीनदयाला। सजल भए द्वौ नयन बिसाला॥4॥

भावार्थ:-

हे नाथ! मुझे सब प्रकार से अपना लीजिए और फिर हे प्रभो! मुझे साथ लेकर अयोध्यापुरी को पधारिए। विभीषणजी के कोमल वचन सुनते ही दीनदयालु प्रभुके दोनों विशाल नेत्रों में (प्रेमाश्रुओं का) जल भर आया॥4॥

दोहा :

*** तोर कोस गृह मोर सब सत्य बचन सुनु भ्रात। भरत दसा सुमिरत मोहि निमिष कल्प सम जात॥116 क॥

भावार्थ:-

(श्री रामजी ने कहा-) हे भाई! सुनो, तुम्हारा खजाना और घर सब मेरा ही है, यह सच बात है। पर

भरत की दशा याद करके मुझे एक-एक पल कल्प के समान बीत रहा है॥116 (क)॥ तापस बेष गात कृस जपत निरंतर मोहि। देखौं बेगि सो जतनु करु सखा निहोरउँ तोहि॥116 ख॥

भावार्थ:-

तपस्वी के वेष में कृश (दुबले) शरीर से निरंतर मेरा नाम जप कर रहे हैं। हे सखा! वही उपाय करो जिससे मैं जल्दी से जल्दी उन्हें देख सकूँ। मैंतुमसे निहोरा (अनुरोध) करता हूँ॥116 (ख)॥

बीतें अवधि जाउँ जौं जिअत न पावउँ बीर। सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु पुनि पुनि पुलक सरीर॥116 ग॥

भावार्थ:-

यदि अवधि बीत जाने पर जाता हूँ तो भाई को जीता न पाऊँगा। छोटे भाईभरतजी की प्रीति का स्मरण करके प्रभु का शरीर बार-बार पुलकित हो रहा है॥166 (ग)॥ करेहु कल्प भरि राजु तुम्ह मोहि सुमिरेहु मन माहिं पुनि मम धाम पाइहहु जहाँ संत सब जाहिं॥116 घ॥

भावार्थ:-

(श्री रामजी ने फिर कहा-) हे विभीषण! तुम कल्पभर राज्य करना, मन में मेरा निरंतर स्मरण करते रहना। फिर तुम मेरे उस धाम को पा जाओगे, जहाँ सब संत जाते हैं॥116 (घ)॥

चौपाई :

*** सुनत बिभीषन बचन राम के। हरषि गहे पद कृपाधाम के॥ बानर भालु सकल हरषाने। गहि प्रभु पद गुन बिमल बखाने॥1॥

भावार्थ:-

श्री रामचंद्रजी के वचन सुनते ही विभीषणजी ने हर्षित होकर कृपा के धाम श्री रामजी के चरण पकड़ लिए। सभी वानर-भालू हर्षित हो गए और प्रभु केचरण पकड़कर उनके निर्मल गुणों का बखान करने लगे॥1॥

विभीषण का वस्त्राभूषण बरसाना और वानर-भालुओं का उन्हें पहनना

*** बहुरि विभीषन भवन सिधायो। मनि गन बसन बिमान भरायो॥ लै पुष्पक प्रभु आगें राखा। हँसि करि कृपासिंधु तब भाषा॥2॥

भावार्थ:-

फिर विभीषणजी महल को गए और उन्होंने मणियों के समूहों (रत्नों) से और वस्त्रों से विमान को भर लिया। फिर उस पुष्पक विमान को लाकर प्रभु केसामने रखा। तब कृपासागर श्री रामजी ने हँसकर कहा-॥2॥

*** चढ़ि बिमान सुनु सखा बिभीषन। गगन जाइ बरषहु पट भूषन॥ नभ पर जाइ बिभीषन तबही। बरषि दिए मनि अंबर सबही॥3॥

भावार्थ:-

हे सखा विभीषण! सुनो, विमान पर चढ़कर, आकाश में जाकर वस्त्रों और गहनों को बरसा दो। तब (आज्ञा सुनते) ही विभीषणजी ने आकाश में जाकर सब मणियों और वस्त्रों को बरसा दिया॥3॥

*** जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेहीं। मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं॥ हँसे रामु श्री अनुज समेता। परम कौतुकी कृपा निकेता॥4॥

भावार्थ:-

जिसके मन को जो अच्छा लगता है, वह वही ले लेता है। मणियों को मुँह में लेकर वानर फिर उन्हें खाने की चीज न समझकर उगल देते हैं। यह तमाशा देखकर परम विनोदी और कृपा के धाम श्री रामजी, सीताजी और लक्ष्मणजी सहित हँसने लगे॥4॥ दोहा:

*** मुनि जेहि ध्यान न पावहिं नेति नेति कह बेद। कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सन करत अनेक बिनोद॥117 क॥

भावार्थ:-

जिनको मुनि ध्यान में भी नहीं पाते, जिन्हें वेद नेति-नेति कहते हैं, वे ही कृपा के समुद्र श्री रामजी वानरों के साथ अनेकों प्रकार के विनोद कर रहे हैं॥117 (क)॥

*** उमा जोग जप दान तप नाना मख ब्रत नेम। राम कृपा नहिं करहिं तसि जसि निष्केवल प्रेम॥117 ख॥

भावार्थ:-

(शिवजी कहते हैं-) हे उमा! अनेकों प्रकार के योग, जप, दान, तप, यज्ञ, व्रत और नियम करने पर भी श्री रामचंद्रजी वैसी कृपा नहीं करते जैसी अनन्य प्रेम होने पर करते हैं॥117 (ख)॥

चौपाई : भालु कपिन्ह पट भूषन पाए। पहिरि पहिरि रघुपति पहिं आए॥ नाना जिनस देखि सब कीसा। पुनि पुनि हँसत कोसलाधीसा॥1॥

भावार्थ:-

भालुओं और वानरों ने कपड़े-गहने पाए और उन्हें पहन-पहनकर वे श्री रघुनाथजी के पास आए। अनेकों जातियों के वानरों को देखकर कोसलपति श्री रामजी बार-बार हँस रहे हैं॥1॥ चितइ सबन्हि पर कीन्ही दाया। बोले मृदुल बचन रघुराया॥ तुम्हरें बल मैं रावनु मार्‌यो। तिलक बिभीषन कहँ पुनि सार्‌यो॥2॥

भावार्थ:-

श्री रघुनाथजी ने कृपा दृष्टि से देखकर सब पर दया की। फिर वे कोमल वचन बोले- हे भाइयो! तुम्हारे ही बल से मैंने रावण को मारा और फिर विभीषण का राजतिलक किया॥2॥ निज निज गृह अब तुम्ह सब जाहू। सुमिरेहु मोहि डरपहु जनि काहू॥ सुनत बचन प्रेमाकुल बानर। जोरि पानि बोले सब सादर॥3॥

भावार्थ:-

अब तुम सब अपने-अपने घर जाओ। मेरा स्मरण करते रहना और किसी से डरना नहीं। ये वचन सुनते ही सब वानर प्रेम में विह्वल होकर हाथ जोड़कर आदरपूर्वक बोले-॥3॥

*** प्रभु जोइ कहहु तुम्हहि सब सोहा। हमरें होत बचन सुनि मोहा॥ दीन जानि कपि किए सनाथा। तुम्ह त्रैलोक ईस रघुनाथा॥4॥

भावार्थ:-

प्रभो! आप जो कुछ भी कहें, आपको सब सोहता है। पर आपके वचन सुनकर हमको मोह होता है। हे रघुनाथजी! आप तीनों लोकों के ईश्वर हैं। हम वानरों को दीन जानकर ही आपने सनाथ (कृतार्थ) किया है॥4॥

*** सुनि प्रभु बचन लाज हम मरहीं। मसक कहूँ खगपति हित करहीं॥ देखि राम रुख बानर रीछा। प्रेम मगन नहिं गृह कै ईछा॥5॥

भावार्थ:-

प्रभु के (ऐसे) वचन सुनकर हम लाज के मारे मरे जा रहे हैं। कहीं मच्छर भी गरुड़ का हित कर सकते हैं? श्री रामजी का रुख देखकर रीछ-वानर प्रेम में मग्न हो गए। उनकी घर जाने की इच्छा नहीं है॥5॥

पुष्पक विमान पर चढ़कर श्री सीता-रामजी का अवध के लिए प्रस्थान, श्री रामचरित्र की महिमा

दोहा :

*** प्रभु प्रेरित कपि भालु सब राम रूप उर राखि। हरष बिषाद सहित चले बिनय बिबिध बिधि भाषि॥118 क॥

भावार्थ:-

परन्तु प्रभु की प्रेरणा (आज्ञा) से सब वानर-भालू श्री रामजी के रूप को हृदय में रखकर और अनेकों प्रकार से विनती करके हर्ष और विषाद सहित घर को चले॥118 (क)॥

*** कपिपति नील रीछपति अंगद नल हनुमान। सहित बिभीषन अपर जे जूथप कपि बलवान॥118 ख॥

भावार्थ:-

वानरराज सुग्रीव, नील, ऋक्षराज जाम्बवान्, अंगद, नल और हनुमान् तथा विभीषण सहित और जो बलवान् वानर सेनापति हैं,॥118 (ख)॥

*** कहि न सकहिं कछु प्रेम बस भरि भरि लोचन बारि॥ सन्मुख चितवहिं राम तन नयन निमेष निवारि॥118 ग॥

भावार्थ:-

वे कुछ कह नहीं सकते, प्रेमवश नेत्रों में जल भर-भरकर, नेत्रों का पलक मारना छोड़कर (टकटकी

लगाए) सम्मुख होकर श्री रामजी की ओर देख रहे हैं॥118 (ग)॥

चौपाई :

*** अतिसय प्रीति देखि रघुराई। लीन्हे सकल बिमान चढ़ाई॥ मन महुँ बिप्र चरन सिरु नायो। उत्तर दिसिहि बिमान चलायो॥1॥

भावार्थ:-

श्री रघुनाथजी ने उनका अतिशय प्रेम देखकर सबको विमान पर चढ़ा लिया। तदनन्तर मन ही मन विप्रचरणों में सिर नवाकर उत्तर दिशा की ओर विमान चलाया॥1॥

*** चलत बिमान कोलाहल होई। जय रघुबीर कहइ सबु कोई॥ सिंहासन अति उच्च मनोहर। श्री समेत प्रभु बैठे ता पर॥2॥

भावार्थ:-

विमान के चलते समय बड़ा शोर हो रहा है। सब कोई श्री रघुवीर की जय कह रहे हैं। विमान में एक अत्यंत ऊँचा मनोहर सिंहासन है। उस पर सीताजी सहित प्रभु श्री रामचंद्रजी विराजमान हो गए॥2॥ राजत रामु सहित भामिनी। मेरु सृंग जनु घन दामिनी॥ रुचिर बिमानु चलेउ अति आतुर। कीन्ही सुमन बृष्टि हरषे सुर॥3॥

भावार्थ:-

पत्नी सहित श्री रामजी ऐसे सुशोभित हो रहे हैं मानो सुमेरु के शिखर पर बिजली सहित श्याम मेघ हो। सुंदर विमान बड़ी शीघ्रता से चला। देवता हर्षित हुए और उन्होंने फूलों की वर्षा की॥3॥ परम सुखद चलि त्रिबिध बयारी। सागर सर सरि निर्मल बारी॥ सगुन होहिं सुंदर चहुँ पासा। मन प्रसन्न निर्मल नभ आसा॥4॥

भावार्थ:-

अत्यंत सुख देने वाली तीन प्रकार की (शीतल, मंद, सुगंधित) वायु चलने लगी। समुद्र, तालाब और नदियों का जल निर्मल हो गया। चारों ओर सुंदर शकुन होने लगे। सबके मन प्रसन्न हैं, आकाश और दिशाएँ निर्मल हैं॥4॥

*** कह रघुबीर देखु रन सीता। लछिमन इहाँ हत्यो इँद्रजीता॥ हनूमान अंगद के मारे। रन महि परे निसाचर भारे॥5॥

भावार्थ:-

श्री रघुवीरजी ने कहा- हे सीते! रणभूमि देखो। लक्ष्मण ने यहाँ इंद्र को जीतने वाले मेघनाद को मारा था। हनुमान् और अंगद के मारे हुए ये भारी-भारी निशाचर रणभूमि में पड़े हैं॥5॥

*** कुंभकरन रावन द्वौ भाई। इहाँ हते सुर मुनि दुखदाई॥6॥

भावार्थ:-

देवताओं और मुनियों को दुःख देने वाले कुंभकर्ण और रावण दोनों भाई यहाँ मारे गए॥6॥

दोहा :

*** इहाँ सेतु बाँध्यों अरु थापेउँ सिव सुख धाम। सीता सहित कृपानिधि संभुहि कीन्ह प्रनाम॥119 क॥

भावार्थ:-

मैंने यहाँ पुल बाँधा (बँधवाया) और सुखधाम श्री शिवजी की स्थापना की। तदनन्तर कृपानिधान श्री रामजी ने सीताजी सहित श्री रामेश्वर महादेव को प्रणाम किया॥119 (क)॥ जहँ जहँ कृपासिंधु बन कीन्ह बास बिश्राम। सकल देखाए जानकिहि कहे सबन्हि के नाम॥119 ख॥

भावार्थ:-

वन में जहाँ-तहाँ करुणा सागर श्री रामचंद्रजी ने निवास और विश्राम किया था, वे सब स्थान प्रभु ने जानकीजी को दिखलाए और सबके नाम बतलाए॥119 (ख)॥

चौपाई : तुरत बिमान तहाँ चलि आवा। दंडक बन जहँ परम सुहावा॥ कुंभजादि मुनिनायक नाना। गए रामु सब कें अस्थाना॥1॥

भावार्थ:-

विमान शीघ्र ही वहाँ चला आया, जहाँ परम सुंदर दण्डकवन था और अगस्त्य आदि बहुत से मुनिराज रहते थे। श्री रामजी इन सबके स्थानों में गए॥1॥

*** सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा। चित्रकूट आए जगदीसा॥ तहँ करि मुनिन्ह केर संतोषा। चला बिमानु तहाँ ते चोखा॥2॥

भावार्थ:-

संपूर्ण ऋषियों से आशीर्वाद पाकर जगदीश्वर श्री रामजी चित्रकूट आए। वहाँ मुनियों को संतुष्ट किया। (फिर) विमान वहाँ से आगे तेजी के साथ चला॥2॥

*** बहुरि राम जानकिहि देखाई। जमुना कलि मल हरनि सुहाई॥ पुनि देखी सुरसरी पुनीता। राम कहा प्रनाम करु सीता॥3॥

भावार्थ:-

फिर श्री रामजी ने जानकीजी को कलियुग के पापों का हरण करने वाली सुहावनी यमुनाजी के दर्शन कराए। फिर पवित्र गंगाजी के दर्शन किए। श्री रामजी ने कहा- हे सीते! इन्हें प्रणाम करो॥3॥

*** तीरथपति पुनि देखु प्रयागा। निरखत जन्म कोटि अघ भागा॥ देखु परमपावनि पुनि बेनी। हरनि सोक हरि लोक निसेनी॥4॥ पुनि देखु अवधपुरि अति पावनि। त्रिबिध ताप भव रोग नसावनि॥5॥

भावार्थ:-

फिर तीर्थराज प्रयाग को देखो, जिसके दर्शन से ही करोड़ों जन्मों के पाप भाग जाते हैं। फिर परम पवित्र त्रिवेणीजी के दर्शन करो, जो शोकों को हरने वाली और श्री हरि के परम धाम (पहुँचने) के लिए सीढ़ी के समान है। फिर अत्यंत पवित्र अयोध्यापुरी के दर्शन करो, जो तीनों प्रकार के तापों

और भव (आवागमन रूपी) रोग का नाश करने वाली है॥4-5॥

दोहा : सीता सहित अवध कहुँ कीन्ह कृपाल प्रनाम। सजल नयन तन पुलकित पुनि पुनि हरषित राम॥120 क॥

भावार्थ:-

यों कहकर कृपालु श्री रामजी ने सीताजी सहित अवधपुरी को प्रणामकिया। सजल नेत्र और पुलकित शरीर होकर श्री रामजी बार-बार हर्षित हो रहे हैं॥120 (क)॥ पुनि प्रभु आइ त्रिबेनीं हरषित मज्जनु कीन्ह। कपिन्ह सहित बिप्रन्ह कहुँ दान बिबिध बिधि दीन्ह॥120 ख॥

भावार्थ:-

फिर त्रिवेणी में आकर प्रभु ने हर्षित होकर स्नान किया और वानरों सहित ब्राह्मणों को अनेकों प्रकार के दान दिए॥120 (ख)॥

चौपाई :

*** प्रभु हनुमंतहि कहा बुझाई। धरि बटु रूप अवधपुर जाई॥ भरतहि कुसल हमारि सुनाएहु। समाचार लै तुम्ह चलि आएहु॥1॥

भावार्थ:-

तदनन्तर प्रभु ने हनुमान्‌जी को समझाकर कहा- तुम ब्रह्मचारी का रूपधरकर अवधपुरी को जाओ। भरत को हमारी कुशल सुनाना और उनका समाचार लेकर चले आना॥1॥

*** तुरत पवनसुत गवनत भयऊ। तब प्रभु भरद्वाज पहिं गयऊ॥ नाना बिधि मुनि पूजा कीन्ही। अस्तुति करि पुनि आसिष दीन्ही॥2॥

भावार्थ:-

पवनपुत्र हनुमान्‌जी तुरंत ही चल दिए। तब प्रभु भरद्वाजजी के पासगए। मुनि ने (इष्ट बुद्धि से) उनकी अनेकों प्रकार से पूजा की और स्तुति कीऔर फिर (लीला की दृष्टि से) आशीर्वाद दिया॥2॥

*** मुनि पद बंदि जुगल कर जोरी। चढ़ि बिमान प्रभु चले बहोरी॥ इहाँ निषाद सुना प्रभु आए। नाव नाव कहँ लोग बोलाए॥3॥

भावार्थ:-

दोनों हाथ जोड़कर तथा मुनि के चरणों की वंदना करके प्रभु विमान पर चढ़कर फिर (आगे) चले। यहाँ जब निषादराज ने सुना कि प्रभु आ गए, तब उसने 'नाव कहाँ है? नाव कहाँ है?' पुकारते हुए लोगों को बुलाया॥3॥ सुरसरि नाघि जान तब आयो। उतरेउ तट प्रभु आयसु पायो॥ तब सीताँ पूजी सुरसरी। बहु प्रकारपुनि चरनन्हि परी॥4॥

भावार्थ:-

इतने में ही विमान गंगाजी को लाँघकर (इस पार) आ गया और प्रभु की आज्ञा पाकर वह किनारे पर उतरा। तब सीताजी बहुत प्रकार से गंगाजी की पूजाकरके फिर उनके चरणों पर गिरीं॥4॥

दीन्हि असीस हरषि मन गंगा। सुंदरि तव अहिवात अभंगा॥ सुनत गुहा धायउ प्रेमाकुल। आयउ निकट परम सुख संकुल॥5॥

भावार्थ:-

गंगाजी ने मन में हर्षित होकर आशीर्वाद दिया- हे सुंदरी! तुम्हारा सुहाग अखंड हो। भगवान् के तट पर उतरने की बात सुनते ही निषादराज गुह प्रेममें विह्वल होकर दौड़ा। परम सुख से परिपूर्ण होकर वह प्रभु के समीपआया,॥5॥

*** प्रभुहि सहित बिलोकि बैदेही। परेउ अवनि तन सुधि नहिं तेही॥ प्रीति परम बिलोकि रघुराई। हरषि उठाइ लियो उर लाई॥6॥

भावार्थ:-

और श्री जानकीजी सहित प्रभु को देखकर वह (आनंद-समाधि में मग्न होकर) पृथ्वी पर गिर पड़ा, उसे शरीर की सुधि न रही। श्री रघुनाथजी ने उसका परम प्रेम देखकर उसे उठाकर हर्ष के साथ हृदय से लगा लिया॥6॥

छंद- :

*** लियो हृदयँ लाइ कृपा निधान सुजान रायँ रमापति। बैठारि परम समीप बूझी कुसल सो कर बीनती॥ अब कुसल पद पंकज बिलोकि बिरंचि संकर सेब्य जे। सुख धाम पूरनकाम राम नमामि राम नमामि ते॥1॥

भावार्थ:-

सुजानों के राजा (शिरोमणि), लक्ष्मीकांत, कृपानिधान भगवान् ने उसको हृदय से लगा लिया और अत्यंत निकट बैठकर कुशल पूछी। वह विनती करने लगा- आपके जो चरणकमल ब्रह्माजी और शंकरजी से सेवित हैं, उनके दर्शन करके मैं अब सकुशल हूँ। हे सुखधाम हे पूर्णकाम श्री रामजी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ, नमस्कार करता हूँ॥1॥

*** सब भाँति अधम निषाद सो हरि भरत ज्यों उर लाइयो। मतिमंद तुलसीदास सो प्रभु मोह बस बिसराइयो॥ यह रावनारि चरित्र पावन राम पद रतिप्रद सदा। कामादिहर बिग्यानकर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा॥2॥

भावार्थ:-

सब प्रकार से नीच उस निषाद को भगवान् ने भरतजी की भाँति हृदय से लगा लिया।

तुलसीदासजी कहते हैं- इस मंदबुद्धि ने (मैंने) मोहवश उस प्रभु को भुला दिया। रावण के शत्रु का यह पवित्र करने वाला चरित्र सदा ही श्री रामजी के चरणों में प्रीति उत्पन्न करने वाला है। यह कामादि विकारों को हरने वाला और (भगवान् के स्वरूप का) विशेष ज्ञान उत्पन्न करने वाला है। देवता, सिद्ध और मुनि आनंदित होकर इसे गाते हैं॥2॥

दोहा : समर बिजय रघुबीर के चरित जे सुनहिं सुजान। बिजय बिबेक बिभूति नित तिन्हहि देहिं

भगवान॥121 क॥

भावार्थ:-

जो सुजान लोग श्री रघुवीर की समर विजय संबंधी लीला को सुनते हैं, उनको भगवान् नित्य विजय, विवेक और विभूति (ऐश्वर्य) देते हैं॥।121 (क)॥ यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार। श्री रघुनाथ नाम तजि नाहिन आन अधार॥121 ख॥

भावार्थ:-

अरे मन! विचार करके देख! यह कलिकाल पापों का घर है। इसमें श्री रघुनाथजी के नाम को छोड़कर (पापों से बचने के लिए) दूसरा कोई आधार नहीं है॥121 (ख)॥

मासपारायण, सत्ताईसवाँ विश्राम इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने षष्ठः सोपानः समाप्तः।

कलियुग के समस्त पापों का नाश करने वाले श्री रामचरित मानस का यह छठा सोपान समाप्त हुआ।

(लंकाकाण्ड समाप्त)